Shodhaamrit, Vol.-3; Issue-3 (July-September) 2026 : Page No.-85-91

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-5.375
Vol.-3; issue-3 (July-Sept.) 2026
Page No- 85-91
©2026 Shodhaamrit
DOI- 10.71037/Shodhaamrit.v3i3.13
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. श्वेता दीप्ति

अध्यक्ष, हिन्दी केन्द्रीय विभाग,
त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल.

Corresponding Author :

डॉ. श्वेता दीप्ति

अध्यक्ष, हिन्दी केन्द्रीय विभाग,
त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल.

रेणु की 'रसप्रिया' और लौकिक प्रेम

शोध–सार : साहित्य कभी मरता नही है और न ही आउट आफ फैशन होता है। वो भी उस हालत में जब कोई साहित्यकार कालजयी हो। एक सशक्त, संवेदनशील बुद्धिजीवी वह प्रकाशपुंज होता है जिसे जाने के पश्चात् याद करने पर यह हर्ष भी होता है कि एक समय हमारा समाज ऐसी महान विभूति के स्नेह से सिंचित रहा, और कहीं एक क्लेश भी होता है कि आज ऐसे लेखक कहाँ हैं। चेखव ने कहा था, कुछ लोग जीवन में बहुत भोगते सहते हैं — ऐसे आदमी ऊपर से बहुत हल्के और हँसमुख देते हैं। वे अपनी पीड़ा दूसरों पर नहीं थोपते, क्योंकि उनकी शालीनता उन्हें अपनी पीड़ा का प्रदर्शन करने से रोकती है। रेणु ऐसे ही शालीन व्यक्ति थे। पता नहीं जमीन की कौन सी गहराई से उनका हल्कापन उभर आता था, यातना की कितनी परतों को फोड़कर उनकी मुस्कुराहट में बिखर जाता था। उनके लम्बे बाल, एक संक्षिप्त और सहज मुस्कान जो अभिजात्य सौजन्य से भीगी रहती थी। यह था सीधे शब्दों में रेणु का व्यक्तित्व। किन्तु सच तो यह है कि रेणु के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को कोई भी और किसी की भी लेखनी पूर्ण परिभाषित नहीं कर सकती। रेणु के लेखन की सत्यता उसे अन्य लेखकों से भिन्न करती है। प्रेमचंद ने भी ग्रामीण जीवन के विषय में लिखा और बहुत ज़मीनी सत्य लिखा परंतु रेणु की शैली में विचित्र–सी अबोध सत्यता है। रेणु के लेखन में सत्य, संवेदना के अलावा एक नया पक्ष है– स्वर और संगीत का।

प्रस्तुत शोध आलेख में रेणु की कहानी 'रसप्रिया' के परिदृश्य में लौकिक प्रेम और समाज से विलुप्त होती लोक संगीत की पीड़ा पर दृष्टिपात किया गया है। लोक गीतों में किसी भी समाज की आत्मा बसती है। समाज का वास्तविक रूप अगर देखना हो तो लोकगीतों की दुनिया में जाइए वहाँ आपको उसके दर्शन हो जाएँगे। धरती की उसर होते जीवन में ये लोकगीत ओएसिस की तरह आशा एवं उम्मीद जगाने का काम करते हैं। साथ ही प्रस्तुत आलेख में रेणु रचित कहानी रसप्रिया में समाज की विद्रुपताओं पर भी चर्चा की गई है।

शब्द कुँजी : रसप्रिया, सौन्दर्य–बोध, अवर्ण, अपरूप–यौवन, जन–संस्कृति, लोकरस, विपन्न, सामंती मूल्य व्यवस्था, संवेदनात्मक, थेथरई।

विषय प्रवेश : इस कहानी के तीन पात्र हैं – दाएं हाथ की टेढ़ी उंगली के चलते ठीक से मृदंग न बजा पाने वाला दीन हीन पंचकौड़ी मिरदंगिया, प्रकट रूप में छाया मात्र दिखने वाली पर भाव रूप में उपस्थित सबसे सशक्त रमपतिया और सांस्कृतिक उपेक्षा के दौर में बगैर किसी गुरु से सीखे एकदम शुद्ध रसप्रिया गाने वाला चरवाहा लड़का मोहना। यूं तो रमपतिया और मोहना मां–बेटे हैं, पर जेठ की दुपहरी में पहली बार मिलने पर भी मिरदंगिया मोहना के लिए अपरिचित नहीं है– वह उसके बारे में सालों पुरानी अंतरंग बातें जानता है, पहचान बस उसकी टेढ़ी उंगलियां और गले में लटका मृदंग है। आठ सालों तक रमपतिया के पिता से पंचकौड़ी ने तालीम ली, अपनी जाति छुपा कर प्रेम किया और जब गुरु ने अपनी बेटी से उसकी शादी करनी चाही, तो उसने सच बोलना मुनासिब समझा और वहां से भाग खड़ा हुआ। इसके बाद दोनों वंचना और अभाव का अनिश्चित जीवन जीते रहे– सालों बाद एक बार गुलाब बाग मेले में मिले भी तो उलाहना और लांछनों के बीच। इसी मेले में पंचकौड़ी की उंगलियां टेढ़ी हो गईं और रमपतिया की लाख दुआओं के बाद भी ठीक नहीं हुईं। कोसी की बाढ़ में सब कुछ गंवा देने के बाद जमींदारों के घर का बर्तन बासन करते हुए रमपतिया की कोख से मोहना का जन्म होता है – उधर पंचकौड़ी एक युग से गले में मृदंग लटका कर भीख मांग कर जीवन यापन कर रहा है। फिर एक दिन इन तीनों को अप्रत्याशित रूप में अचानक मिलाने वाला कारक भी रसप्रिया ही बनता है, जो मोहना के माध्यम से पंचकौड़ी मिरदंगिया और रमपतिया के सुप्त प्रेम को सजल–सप्राण कर देता है। गुनी आदमी के साथ रसप्रिया गाकर मोहना जहां अत्यंत प्रसन्न है, वहीं मिरदंगिया उस पर अपना सारा लाड़ निछावर करता है। उसको लगता है कि टेढ़ी उंगलियां अब सीधी होने लगी हैं। प्रेम और परम्परा यही इस कहानी का मूल भाव है। रेणु महान कथाकार हैं। भले ही यह मिथ हो, फैंटेसी हो, कल्पना हो या प्रेम में उम्मीद को बचाने की भरसक कोशिश करते हैं।

हिन्दी कथा साहित्य में फणीश्वर नाथ रेणु मील का पत्थर हैं। माना जाता है कि रेणु प्रेमचंद की परम्परा के एकमात्र कथाकार हैं। रेणु प्रेमचंद की विरासत हैं या नहीं, यह विषय विवादित हो सकता है, लेकिन इतना तो निर्विवाद है कि नई कहानियों की धारा में रेणु की नाव सबसे आगे है। रेणु की पहली कहानी संग्रह 'ठुमरी' नाम से प्रकाशित हुई थी और इस संग्रह की रसप्रिया कहानी अपने प्रथम प्रकाशन के साथ ही जनप्रिय बन गई।

"रेणु की आँचलिकता एकदेशीय तत्व नहीं है। वह स्थानीय भी नहीं है। उसमें ग्रामांचलों की समस्त धड़कनें कैद हैं।"[1]

"ग्राम्य जीवन में घुले मिले रेणु का असर उनकी रचनाओं में प्रतिबिम्बित होता है। बिरहा, प्राती, समदौन, फगुआ, बटगमन, बाहरमासा, जोगीरा, नेपाली गीत.....बिदापत आदि के माध्यम से ग्रामीण समाज के रीति–रिवाज.....का चित्रण कर रेणु ग्रामीण परिदृश्य की बहुरंगी छटा उकेरते हैं।"[2]

'रसप्रिया' रेणु की अत्यन्त ही सधी हुई कहानी है। इसमें ग्रामीण जीवन की सौरभ श्री से निकला हुआ कलाकार के मन का संगीत फूटा है, इसीलिए इस कहानी में प्रकृति के अपरूप–यौवन और सौंदर्य के अनेकानेक चित्र भी अनायास आ जाते हैं। रस खोजी सामाजिक सम्बन्धों को नितान्त आत्मीय ढंग से देखा दिखाया है और देहाती जीवन में प्रेम के आड़े तिरछे रूप का निर्देश किया है, यह उनकी विलक्षण प्रतिभा और ग्राम्य जीवन के साथ अटूट लगाव का प्रमाण है। इस कहानी में अमानवीय परिस्थितियों के बीच भी मानवीयता के विकास का चित्रण हुआ है, क्योंकि कहानीकार की आस्था मानवीय विकास के प्रति अखण्ड रूप से सजग रही है। यह ध्यान देने की बात है कि रेणु मानवीयता का विकास सामान्य जन–जीवन में देखते हैं और मनुष्य विरोधी शक्तियों के रूप में वे सामंत वर्ग तथा उसकी सामाजिक मान्यताओं को दिखाते हैं। रेणु की मानवीयता का स्रोत लोक संस्कृति है।

"रसप्रिया का रूपक अपनी संरचना में उतना ही विडम्बनापूर्ण है, जितना जीवन अपनी वास्तविकता मैं। यह त्रासदी ही इस कहानी का मूल तनाव है।"[3]

'रसप्रिया' का मिरदंगिया हो या 'तीसरी कसम' का हिरामन उसके जीवन, सामाजिक सम्बन्धों, सोच और भावनाओं में विरोधी परिस्थितियों के बावजूद मानवीयता का विकास दिखाई देता है। रेणु के विचार से समाज में

मानवीयता के अस्तित्व और विकास को सामंती मूल्य व्यवस्था निगल जाने के लिए हर दम तैयार रहती है। वे यह भी मानते हैं कि निश्चल मानवीयता को वर्ग भेद, शोषण, गरीबी और फरेबी राजनीति से हमेशा खतरा है। उनके अनुसार समाज में जिस मानवीयता का दमन होता है वहाँ समाज विरोधी मनुष्य बढ़ते हैं, और जो शक्तियाँ मानवीयताज्ञका दमन करती हैं, वे ही समाज विरोधी मनुष्यों को बढ़ावा देती हैं। इसलिए रेणु अपनी कहानियों में ऐसी समाज व्यवस्था और शक्तियों का असली रूप बेपर्दा कर देते हैं। वे हर जगह लोक संस्कृति में मानवीयता के विकास की सम्भावनाएँ देखते हैं। यही कारण है कि वे समाज को मानवीय और मनुष्य को सामाजिक बनाने के उद्देश्य से लोक संस्कृतिमूलक समाज के गठन की बात करते हैं। शोषण और उत्पीड़न से भरी अमानवीय स्थिति में जीने वाली जनता सौंदर्य और रस से भरी–पूरी ऐसी जन–संस्कृति की रचना करती है, जिसमें उसके जीवन की वास्तविकताएँ और आकांक्षाएँ व्यक्त होती हैं, उसकी मानवीयता प्रकट होती है।

रेणु का दृष्टिकोण सामाजिक मनुष्य और मानवीय समाज बनाने पर केन्द्रित रही है, इसलिए वे अपनी प्रत्येक कहानी में इंसान और इंसानियत की तलाश करते हैं। यह तलाश बौद्धिक स्तर पर नहीं बल्कि रागात्मक धरातल पर होती है। इसलिए रेणु अपनी कहानी में स्थितियों के विश्लेषण से अधिक अनुभवों की अभिव्यक्ति पर अधिक जोर देते हैं। उनका यह दृष्टिकोण रसप्रिया कहानी में और भी तरल होकर बहा है। मिरदंगिया के व्यक्तित्व में विभिन्न जीवन संदर्भों में मानवीयता के अलग–अलग रुप और पक्ष उजागर हुए हैं। आज जीवन से रस ही गायब होता जा रहा है जो कथाकार को पीड़ा देता है। उनका रसजीवी कथाकार रसप्रिया के संगीत को सामान्य व्यक्ति के सामाजिक संदर्भों में देखना चाहता है। रेणु जानते हैं कि, अकेला जीवन एकरस होने को अभिशप्त है, क्योंकि एकाकीपन का अंधकार, दुस्सह है इसका मूक भार। इसलिए वे विरहा, चाँचर ,लगनी, बारहमासा तथा रिमझिम वर्षा और चिलचिलाती धूप में लोकरस प्राप्त करते हैं। आखिर रसप्रिया है क्या ? रेणु लिखते हैं - "विद्यापति नाचने वाले रसप्रिया गाते थे। सहरसा के जोगेन्दर झा ने विद्यापति के बारह पदों की एक पुस्तिका छपाई थी। मेले में खूब बिक्री हुई थी, रसप्रिया पोथी की। विदापत नाचने वाले ने गा–गाकर जनप्रिया बना दिया था, रसप्रिया को।"[4]

रेणु को चिंता है कि रसप्रिया का राग जन–जीवन से क्यों मर रहा है— जेठ की चढ़ती दोपहरी में खेतों में काम करने वाले भी अब गीत नहीं गाते हैं। कुछ दिनों के बाद कोयल भी कूकना भूल जाएगी क्या ? ऐसी दोपहरी में चुपचाप कैसे काम किया जाता है ? पाँच साल पहले तक तो लोगों के दिल में हुलास बाकी था। पहली वर्षा से भीगी हुई धरती के हरे–भरे पौधों से एक खास किस्म की गंध निकलती है।

तपती दोपहरी में मोम की तरह गल उठती थी रस की डाली, वे गाने लगते थे विरहा, चाँचर, लगनी...।

हाँ..रे, हल जोते हलवाहा भैया रे...

खुरपी रे चलावे..म..ज..दू..र।

एहि पन्थे, धनी मोरा हे रुसलि...।[5]

रेणु की चिंता यही है कि जन जीवन से रस की धार सूखी जा रही है लोक संस्कृति मर रही है। रेणु को जीवन की कठोर वास्तविकताओं और उसकी गतिमयता में अखण्ड विश्वास है। हमारा लोक जीवन चाहे जितना भी गरीब और अशिक्षित हो जाय, परन्तु उसके पास लोक संस्कृति की कुबेर सम्पदा है। यह लोक जीवन विपत्ति, अभाव और गरीबी में भी अपना धन उदात्त हाथों से उलीचता रहता है। किन्तु आज यही लोक संस्कृति विलुप्त होती जा रही है जो निःसन्देह चिन्तनीय है। 'रसप्रिया' में रेणु ने निम्नवर्ग के अवर्ण पात्रों को प्रमुख पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है। निम्न वर्ग के पात्रों को अपनी कहानी का विषय प्रेमचंद ने भी बनाया है किन्तु वो उनके दुखों में उलझे रह गए, जबकि रेणु ने निम्नवर्गीय अवर्ण पात्रों के जीवन रस को भी उद्घाटित कर दिया है। आर्थिक दृष्टि से 'रसप्रिया' कहानी का मिरदंगिया बहुत ही विपन्न है, लेकिन उसके भीतर जो सांस्कृतिक सम्पन्नता है, रेणु की दृष्टि वहाँ जाती है। मिरदंगिया का सौन्दर्यबोध सुविधाग्रस्त वर्ग के सौन्दर्यबोध से भिन्न और अधिक सजीव है। उसका सौन्दर्यबोध चरवाहा मोहना छौरा को देखते ही अपरूप रूप कहकर फूट पड़ता है। मोहनाज्ञ की सुन्दरता को देखकर

मिरदंगिया की क्षीण ज्योति आँखें सजल हो जाती हैं। पर मोहना की सुन्दरता के बहाने रेणु समाज के एक कड़वे सच को भी उद्घाटित करते चलते हैं — "सवर्णों के घर में नहीं, छोटी जाति के लोगों के यहाँ मोहना जैसे लड़की मुँहा लड़के हमेशा पैदा नहीं होते। ये अवतार लेते हैं, समय–समय पर जदा, जदा हि....।"[6]

इस उक्ति में सवर्णों पर बेधड़क व्यंग्य किया गया है। यह व्यंग्य कई स्तरों पर पाठकों का स्वाद बदलता रहता है। समाज की व्यवस्था की एक बानगी देखिए —सुबह–सुबह ही शोभा मिसिर के छोटे लड़के ने मिरदंगिया से कहा था - "तुम जी रहे हो या थेथरई कर रहे हो मिरदंगिया ?"[7]

ऊँची जाति के बच्चों को भी ऐसी बेहुदी बातें करने का अधिकार जिस समाज व्यवस्था ने दे रखा है रेणु उसी पर बेधड़क व्यंग्य चलाते हैं।

मोहना को देखकर मिरदंगिया के मुँह से बेटा सम्बोधन निकलना चाहता है, लेकिन वह 'बे' कह कर ही रुक जाता है, उसके आगे 'टा' जोड़ने का साहस वह नहीं कर पाता है। इस बेबसी की वजह यह है कि एक बार पर मानपुर में उसने एक ब्राह्मण के लड़के को प्यार से बेटा कह दिया था, सारे गाँव के लड़कों ने उसे घेर कर मारने की तैयारी की थी—"बहरदार होकर ब्राह्मण के बच्च को बेटा हेगा। मारो साले बुड्ढे को घेर कर ! मृदंग फोड़ दी। "[6] लड़कों के इस उग्र तेवर को भी मिरदंगिया ने कितनी सहजता से झेल लिया था — "अच्छा इस बार माफ कर दो सरकार ! अब से आप लोगों को बाप ही कहूंगा। "[8]

कितनी चुभन है इस संवाद में। समाज की वह व्यवस्था जहाँ सवर्णों का बोल बाला हो वहाँ यही तो होता है, निम्नवर्ग को जीने का हक कहाँ रह जाता है ? वो जिन्दा लाश ही तो होते हैं। उन्हें भला कहाँ अधिकार है कि वो अपना अच्छा भला सोच सके। हालात आज भी नहीं बदले हैं। समाज की दशा तकरीबन वही है। रेणु का समाज जिस रूप में था कमोवेश वह आज भी है। रसप्रिया का पंचकौड़ी मिरदंगिया जब मोहना को देखता है तो उसके पेट की तिल्ली को देखकर उसे बहुत चिन्ता होती है। एक गुणवान को तिल–तिल मरते हुए देखने की कल्पना भी वह नहीं करना चाहता है। मिरदंगिया जानता है कि मोहना जैसे बच्चों के पेट की तिल्ली चिता पर ही गलती है। क्योंकि इलाज के लिए पैसे कहाँ होते हैं उनके पास, ऐसे में क्या होगा पूछ कर कि दवा क्यों नहीं करवाते हो ? फिर भी मिरदंगिया अपनी गाढ़ी कमाई का जमा किया हुआ चालीस रुपया मोहना पर उत्सर्ग कर देता है। मिरदंगिया स्वयं गरीबी की बीमारी से जूझ रहा है, इसलिए उसे मोहना की तकलीफ से कष्ट होता है। रेणु जिस इसांनियत की तलाश करते हैं वह मिरदंगिया जैसे उपेक्षित लोगों के पास ही बची रह गई है। इसांनियत जीवित है गाँवों में और वह भी दबे पिसे उपेक्षित, अपमानित पचंकौड़ी जैसे कलाकार के गले में लटका हुआ मृदंग बनकर। इसी मृदंग से रसप्रिया का बोल निकलता है। इसी बोल पर गाँव का छौड़ा नटुआ बनकर नव वृन्दावन नवल वसन्त का गीत गाने लगता है। इसी बोल से राधा की थिरकन निःसृत होती है और इसी बोल में रसराज कृष्ण की बाँसुरी की मद शिथिल वाणी घुल मिल जाती है। रस के बिना जीवन नीरस हो जाएगा। इसलिए रेणु जन–जीवन में रसप्रिया का बोल छिडक़ देना चाहते हैं। इस मूल संवेदना के साथ ही 'रसप्रिया' कहानी लिखी गई है।

'रसप्रिया' कहानी मूलरुप से प्रेम कहानी है। मिरदंगिया ने रमपतिया से प्रेम किया था। रमपतिया उसके जोधन गुरु जी की बाल विधवा बेटी थी। वह मिरदंगिया के रसप्रिया गीतों से अभिभूत होकर उसकी ओर आकर्षित होती है। मिरदंगिया ने भी अपने प्रेमोन्मत्त जवानी का उपयोग किया परिणामस्वरुप रमपतिया गर्भवती हो गई तो जोधन गुरुजी ने उसके सामने चुमौना का प्रस्ताव रखा। प्रस्ताव सुनते ही मिरदंगिया रातोरात वहाँ से भाग खड़ा हुआ। इस प्रसंग से यही लगता है कि मिरदंगिया ने बहुत बड़ा फरेब किया था। रमपतिया भी आकाश की ओर हाथ उठाकर बोलती है- "हे दिनकर ! साच्छी रहना, मिरदंगिया ने फुसलाकर मेरा सर्वनाश किया है। मेरे मन में कभी चोर नहीं था। हे सुरुज भगवान ! इस दसदुआरी का अंग–अंग फूटकर .....।"[9]

अपमान और दुख की आग में जलने वाली रमपतिया को भी शायद नहीं मालूम हो सका कि सचमुच मिरदंगिया फरेबी है, अथवा उसकी कहीं कोई विवशता उसे रोक रही है। असल में मिरदंगिया ने जोधन गुरुजी से अपनी जाति छिपा ली थी। रसप्रिया सीखने और मूलगैन बनने के लोभ में उसने गुरुजी से झूठ कह दिया था। लेकिन जब चुमौने की बात आयी तो वह स्थापित समाज की व्यवस्था को तोड़ने का साहस नहीं कर पाया। कैसी है यह समाज व्यवस्था, जो व्यक्ति के सिर पर जाति की पगड़ी बाँध कर उसके व्यक्तिगत प्रेम को भी हड़प लेती है। पचकौड़ी मिर दंगिया ने रमपतिया के प्रेम की अवमानना कर के, प्रेम में फरेब लाकर अपने जीवन को नर्क बना लिया था। उसका सामाजिक प्रायश्चित भी तो होना चाहिए। इसलिए गाँव के बच्चे मिरदंगिया को गाली देते हैं, अपमानित करते हैं। इतना अपमान सह जाना रमपतिया के लिए प्रायश्चित ही हो सकता है। रमपतिया ने विश्वास दिलाना चाहा था कि, उसके पेट में पल रहा बच्चा उसका ही है किन्तु उसने नन्दूबाबू का नाम लेकर रमपतिया को बदनाम किया था। जबकि वह जानता था कि बच्चा उसी का है किन्तु, समाज के डर से उसने पीछा छुड़ाने के लिए रमपतिया को लांछित किया था और उम्र भर वह इस बात का प्रायश्चित भी करता है। इस स्थिति में रमपतिया के मन में व्यथा का गहरा जाना, आक्रोश का धधक उठना स्वाभाविक था। मिरदंगिया रमपतिया के लिए आँसू बहाता है, रमपतिया भी गुस्से में चाहे जो भी बक गई हो, लेकिन वही फिर प्रायश्चित् करती है और कहती है- "हे दिनकर ! किसने इतनी बड़ी दुश्मनी की ? उसका बुरा हो, मेरी बात लौटा दो भगवान, गुस्से में कही हुई बातें। नहीं, नहीं पाँचू मैंने कुछ भी नहीं किया है, जरुर किसी डायन ने वाण मार दिया है। "[10]

जिस रमपतिया ने गुस्से में अंग–अंग फूटने की बात की थी, वही मिरदंगिया की ऊँगली टेढ़ी हो जाने की बात सुनकर दौड़ी आई और ऊंगली पकड़ कर घन्टों रोती रही थी। मिरदंगिया और रमपतिया आत्मा की धरातल पर अभी भी जुड़े हुए थे, मगर समाज व्यवस्था के डर ने उन्हें एक नहीं होने दिया। रेणु अत्यन्त बारीकी के साथ कहानी के अंत में भी दोनों के प्रेम को घनात्मक स्वीकृति दे डालते हैं, लेकिन उनकी कला इतनी बारीक है कि वो हाँ में नहीं और नहीं में हाँ का बोध कराते हैं। प्रेम की संयमित अभिव्यक्ति रेणु को रोमांटिक होने से बचा लेती है और यहीं उनकी कहानी कला निखर उठती है। रमपतिया तो जानती ही है कि मोहना किसका बेटा है और अब मिरदंगिया भी जान चुका है, फिर भी वह मोहना को बेटा नहीं कह सकता और न ही रमपतिया मोहना को उसके पिता का नाम बता सकती है। इस त्रिभुज की टेढ़ी रेखाएँ प्रेम के जिस त्रिकोण का सृजन करती है, उसे रेणु ने संवेदनात्मक स्तर पर कुशलतापूर्वक व्यक्त किया है।

'रसपिग्रा' कहानी में लोक सस्कृति और आँचलिकता का गहरा रंग साफ–साफ दिखता है। मिरदंगिया को रसपिग्रा के लिए जो प्यास है वह वास्तव में कहानीकार के मन में लोक सस्कृति की प्यास का सूचक है। मिरदंगिया लोक गीत को जीवित रखना चाहता है और इसलिए वह मोहना के तान पर अभिभतू हो जाता है। इस जमाने में भी इतनी शुद्ध रसपिग्रा गानेवाला कहीं कोई है, और वह है मोहना। वह मोहना पर मनप्राणों से निछावर हो जाना चाहता है, क्योंकि वही उसकी परम्परा को बढ़ाने वाला भविष्य है। इस परम्परा को बचाने के लिए ही मिरदंगिया अपनी गाढी कमाई के चालीस रुपए मोहना को दे देता है। रागबद्ध,लयबद्ध जीवन की खोज उसे मोहना तक पहुँचा देती है, जहाँ नई पीढ़ी के गतिमय जीवन में वह अपने विश्वास को खड़ा करता है। मोहना में वह राग और संगीत की अपनी सारी नस्ल की पहचान करता है। वह नहीं जानता है कि मोहना उसका बेटा है, फिर भी अपनत्व की चुम्बकीय शक्ति उसे मोहना की ओर खींच रही है। यह आकर्षण पिता और पुत्र का नहीं है, बल्कि एक कलाकार का नई पीढ़ी के उज्ज्वल भविष्य के लिए उत्पन्न आकर्षण है, जब मिरदंगिया कहता है कि अब से मैं पदावली नहीं, रसप्रिया नहीं, निरगुण गाऊँगा। तो यह एक प्रकार से अगली पीढ़ी में सही गुण पाकर संतुष्ट पिछली पीढ़ी का वानप्रस्थ ग्रहण जैसा लगता है।

लोग मिरदंगिया को भिखमंगा समझते हैं, उसे दसदुआरी कहते हैं, लेकिन मिरदंगिया तो यह मानता है कि किसन कन्हैया भी नाचते थे, नाच तो एक गुन है, अरे जाचक कहो या दसदुआरी, चोरी डकैती और आवारागर्दी

से अच्छा है अपना अपना गुन दिखा कर लोगों को रिझाकर गुजारा करना। इस कलाकार को अपनी कला पर नाज है। जिस लोक सस्कृति को सामंती समाज व्यवस्था के पोषक लोग मन बहलाव की चीज मानते हैं उसपर लोक कलाकारों को स्वाभिमान ही नहीं गर्व भी है। मगर जब ऐसे स्वाभिमानी कलाकार पर लाछंन के पत्थर फेंके जाते हैं तो उसका स्वाभिमान आहत हो उठता है। मोहना जब उसका मुढ़ी आम खाने से इनकार कर देता है कि यह भीख का अन्न है तो मिरदंगिया का स्वाभिमान उग्र रूप धारण कर लेता है। वह तुरन्त प्रतिकार कर उठता है, कौन भीख माँगता है ?, रेणु लिखते हैं कि मिरदंगिया के मन की झाँपी में कुँडली मार कर सोया हुआ साँप फन फैलाकर फुफकार उठा, एस्साला मारेंगे वह तमाचा कि...। कलाकार भूखा नंगा रह सकता है, लेकिन अपना अपमान बर्दास्त नहीं कर सकता। इसलिए तो मोहना जैसे गुणी बालक को भी मिरदंगिया गाली दे बैठता है और उसे मारने के लिए भी तैयार हो जाता है। 'ठेस' कहानी का सिरचन भी इसी तरह आहत हुआ था। रेणु लोक सस्कृति का अपमान नहीं सह सकते।

'रसप्रिया' में रेणु ने जगह–जगह पर लोकगीतों का कुशलतापूर्वक प्रयोग किया है। लोकगीत की इन पंक्तियों को कहानी के बीच में डालकर कहानी के सौन्दर्य को और भी निखार दिया है रेणु ने। ये पंक्तियाँ कहानी में अवरोध उत्पन्न नहीं करती बल्कि उसे आगे बढ़ाने में सहायता ही प्रदान करती है। आँचलिक रस्म रिवाज और संस्कृति को चित्रित करने में रेणु सफल हैं। एक उद्धरण देखिए, मैथिल ब्राह्मणों, कायस्थों और राजपूतों के यहाँ विदापत वालों की बड़ी इज्जत होती थी। अपनी बोली मिथिलांचल में नटुआ के मुँह से जनम अवधि हम रूप निहार ल सुनकर वे निहाल हो जाते थे।

"रसप्रिया' के गठन में एक और तकनीक अपनाई गई है। एक चील को कभी आकाश में उड़ाया जाता है, तो कभी वृक्षों पर बैठाया जाता है और बार –बार उसकी बोली को रेणु शब्दाकिंत करना चाहते हैं– टिं टिं हिं टिंटिंकं इत्यादि। यह चील वास्तव में मिरदंगिया के मन में बैठा हुआ वह माँसल चोर है, जिसने रमपतिया का गर्म माँस खाया था। माँस खाकर चील उड़ गई और आकाश में उसी तरह मडंरा रही है जैसे पंचकौड़ी गले में मृदंग लटका कर पागलों की तरह घूम रहा है। चील से मिरदंगिया को खीझ भी होती है, मानो वह अपने किए से घृणा कर रहा हो।

मिरदंगिया के हृदय की बात को रेणु चील के माध्यम से वस्तुगत प्रतिरूप में बदल देते हैं। इसी तरह जब मोहना रमपतिया को मिरदंगिया के बारे में बताता है तो रमपतिया के माथे पर बँधा घास का बोझ खुल जाता है और खुलकर धरती पर गिर जाता है। घास का बोझ व्यथा का बोझ था और प्रियतम के मँुह से अपनी बात सुन कर मन हल्का हो जाता है। उसके मन में जमा हुआ क्रोध , आक्रोश और घृणा सब कुछ एक क्षण में पिघलकर बह जाते हैं। निश्चल प्रेम्र की सच्ची गाथा ऐसी ही होती है, इसलिए तो रसप्रिया के पाठक के सपने में मिरदंगिया आज भी विदापत का गीत गुन गुनाता है। उसके फँसे हुए गले से अब भी पाठक कई रागों का आरोह अवरोह सुनते रहते हैं। दूर कहीं मोहना और उसकी माँ घास उठाए किसी एकांत पगडंडी पर चुपचाप देखती रहती है। कभी मोहना और उसकी माँ पीछे पलटकर मिरदंगिया को देखते हैं सिहर–सिहर उठता है मिरदंगिया। मोहना की आँखों में एक चमक है और वह चमक पाठक की स्मृतियों में भी बार–बार कौंधती है। उसके मन प्राणों में मृदंग की गम्भीर आवाज अभी भी सुनाई पड़ रही है। मृदंग फूट चुका है, परन्तु आवाज अब भी है और यह आवाज ही वह संवेदना है, जो पाठक को रसप्रिया कहानी के मिरदंगिए से जोड़ती है। कहानी का अंत मोहना के प्रति मृदंगिया के मोहभाव और रमपतिया की परोक्ष उपस्थिति से होता है।

निष्कर्ष : "रेणु जीवन रस के कथाकार हैं। वे इस कहानी में विघटित आप्तलोक के पुनःसृजन की कोशिश करते हैं। ...अकहानी के दौर में भी रस कथा लिखने वाले कहानी कार के हिसाब से उसे अवघात का शाप लगता है। जीव सत्य खोकर कोई समाज कैसे जीवित रह सकता है ?"[11]

पंचकौड़ी मिरदंगिया मिथिला के साहित्य, लोकराग और सांस्कृतिक विरासत को जीवित रखने वाला लुप्तप्राय बूढ़ा कलाकार है। बिदापत नाच में मृदंग बजाने नाचने वाला जुनूनी है। छोटी जातियों के लड़कीमुंहा 'नटुआ' का अनुसंधान करने वाला और नए भर्ती होने वाले इन लड़कों को हफ्ते भर में बिदापत नाच सिखला देने वाला गुणी प्रशिक्षक गुरु है। बिना जैविक बाप बने दर्जनों सुकुमार बालकों का सेवक और वैद्य है। खुद की भाषा में 'महाभिखारी दसदुआरी याचक फकीर' है। रमपतिया की नजर में 'बेईमान गुरुदरोही झूठा' है, परंतु उसमें इतनी गहरी नैतिकता भी है कि अपनी जाति के बारे में झूठ बोल कर रमपतिया का प्रेम हासिल कर लेना स्वीकार नहीं है। अपने समाज और परिवेश से रेणु जी का कितना गहरा और अंतरंग रिश्ता था, यह विभिन्न प्रसंगों में इस कहानी में देखा जा सकता हैः जैसे चील की अलग–अलग ढंग की बोलीः टिं–टिं–टिं–टिंटिक/ टिं–हीं'ई'टिं–टिं–ग/ टिं'ई'टिं–हि–क/टिं–टिं–हिंक और मृदंग के अलग–अलग स्वरः धा तिंग धा तिंग / धिरिनागि, धिरिनागि, धिरिनागि–धिनता। एक स्वाभिमानी कलाकार की नियति तब भी वैसी ही थी, जैसी आज है– जब मिरदंगिया के स्वाभिमान को ठेस लगती है, तो वह कह उठता है : 'किसने कहा कि मैं भीख मांगता हूं/ मिरदंग बजाकर पदावली गाकर लोगों को रिझाकर पेट पालता हूं। '

जीवनभर कितने भी अभाव में मिरदंगिया रहा हो, उसके मन का उदात्त भाव कभी कम नहीं हुआ। क्षीण होते मानवीय सरोकारों के बीच हालातों के हाथों मजबूर और वंचित कर दिए गए निर्धन पात्रों के माध्यम से अजेय रागात्मक मूल्यों में भरोसा लौटाने के लिए यह कहानी बार–बार याद की जाएगी।

सन्दर्भ पुस्तक :

1. चौधरी सुरेन्द्र,(1987), फणीश्वर नाथ रेणु, (कहानियों का गंध परिवेश), साहित्य प्रकाशन, पृ.30
2. पनिया डा. कविता,(2021),गांव की नियति पर कलेजा पीटने वालों से अलग हैं रेणु , साहित्य यात्रा, पटना, पृ.78
3. सिंह संजय कुमार,(2021),रसप्रिया, साहित्य यात्रा, पटना, पृ.73
4. रेणु फणीश्वरनाथ, रसप्रिया, गुगल पुस्तक समय सीमा
5. वही
6. वही
7. वही
8. वही
9. वही
10. वही
11. वही

•